बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 66

चुनाव बाद का गणित

इस समाचार पत्र में शुक्रवार को प्रकाशित कर राजस्व संबंधी आंकड़े झटका देने वाले हैं। यदि तीन महीने पहले संसद के समक्ष प्रस्तुत किए गए वर्ष 2018-19 के संशोधित राजस्व आंकड़ों से तुलना की जाए तो ताजा आंकड़े, कर राजस्व में 1.6 लाख करोड़ रुपये की कमी दिखाते हैं। यानी सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का करीब 0.8 फीसदी। इस कमी के कुछ हिस्से की भरपाई व्यय में अंतिम क्षणों में की गई कटौती से होगी। वर्षांत में दी गई जानकारी के मुताबिक यह कटौती करीब 60,000 करोड़ रुपये की है। यदि इसे ध्यान में रखा जाए तो वर्ष के लिए राजकोषीय घाटे का आंकड़ा, उल्लेख किए गए जीडीपी के 3.4 फीसदी से बढ़कर 3.9 फीसदी हो जाएगा। यह बीते दो वर्ष के आंकड़ों से स्पष्ट गिरावट है।

ये आंकड़े एक और वजह से चौंकाते हैं : केंद्र सरकार की राजस्व वृद्धि केवल 6.2 फीसदी रही। अगर यह कमी 19.5 फीसदी के अत्यंत महत्त्वाकांक्षी राजस्व वृद्धि लक्ष्य की तुलना में रहती तो इसे समझा जा सकता था। ज्यादा चिंता की बात यह है कि सकल संग्रह में वृद्धि (राज्यों के हिस्से को मिलाकर) 8.4 फीसदी रही और यह 11.5 फीसदी की जीडीपी वृद्धि दर (मुद्रास्फीति को शामिल करके सांकेतिक रुप में) से कम है। दूसरे शब्दों में कर-जीडीपी अनुपात में इजाफे का रुझान पलट चुका है। कुछ कमी वस्तु एवं सेवा कर दरों में निरंतर की जा रही कमी की वजह से भी है। इस बीच यह संभवना है कि मुद्रास्फीति के समायोजन के बाद मुख्य आर्थिक वृद्धि दर 7 फीसदी की आधिकारिक तौर पर घोषित दर से कम रह सकती है। मौजूदा वर्ष के लिए इसके निहितार्थ अच्छे नहीं हैं। वर्ष 2019-20 के बजट के आंकड़े 14.9 फीसदी की राजस्व वृद्धि दर का अनुमान जताते हैं। यह अनुमान 2018-19 के लिए प्रकट किया गया था। वास्तविक राजस्व आधार की बात करें तो नए वर्ष के बजट के आंकड़ों को हासिल करने के लिए कर संग्रह में 29.1 फीसदी की गति से वृद्धि जरूरी है।

चूंकि यह संभव नहीं नजर आता है। इसलिए चुनाव के बाद नई सरकार बनते ही सबसे पहले बजट को नए सिरे से आकलित करना होगा। राजस्व और व्यय दोनों ही आंकड़ों में कटौती करनी होगी। इसके बाद ही खपत में आए धीमेपन का आर्थिक गतिविधियों पर असर बेहतर ढंग से परिलक्षित होगा। चूंकि सरकार का अधिकांश व्यय ब्याज भुगतान, सब्सिडी, वेतन और पेंशन जैसी पूर्व प्रतिबद्धता वाली चीजों से संबंधित है। इसलिए तलवार बुनियादी ढांचे में होने वाले निवेश पर गिरेगी। यह क्षेत्र अब तक वृद्धि का अहम वाहक रहा है। वृद्धि के पूर्वानुमान की बात करें तो कुछ कारकों में सुधार हुआ है। उदाहरण के लिए वैश्विक आर्थिक परिस्थितियां और अमेरिका तथा चीन के बीच कारोबारी युद्ध में आ रहा धीमापन। तेल कीमतों में इजाफा हुआ है लेकिन कई तेल निर्यातक ईरान से तेल आपूर्ति रुकने के बाद भरपाई के लिए उत्पादन बढ़ा सकते हैं। घरेलू स्तर पर, मॉनसून के आशा के अनुरूप रहने की उम्मीद नहीं है जबकि विमानन और वाहन क्षेत्रों की स्थिति ठीक नहीं है। दूरसंचार क्षेत्र में भी मूल्यह्रास हो रहा है।

निर्माण क्षेत्र भी सरकारी व्यय पर निर्भर है। वित्तीय और कॉर्पोरेट क्षेत्र फंसे हुए कर्ज और ऋण बोझ के दोहरे संकट से उबर चुके हैं और कर्ज में सुधार हुआ है। परंतु अभी काफी कुछ करना बाकी है और भविष्य में और झटकों की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता। मौद्रिक नीति ने वृद्धि को समर्थन देने का प्रयास किया है लेकिन भारतीय रिजर्व बैंक की ओर से दरों में कटौती का बाजार में नकदी की स्थिति पर कोई खास असर देखने को नहीं मिला और वास्तविक ब्याज दर ऊंची बनी हुई हैं। इसकी एक वजह सरकारी व्यय का स्तर भी है। हमें चुनाव प्रचार अभियान में किए गए लोक लुभावन वादों को इस संदर्भ में देखना होगा। इनमें कर्ज माफी, नकद हस्तांतरण और संभवत: उच्च खाद्य सुरक्षा आदि शामिल हैं। जाहिर है इन बातों के लिए कोई राजकोषीय गुंजाइश नहीं है। ऐसे वक्त में जबकि मौद्रिक नीति की सीमाओं की परीक्षा हो रही है, तो राजकोषीय व्यय में कमी आनी स्वाभाविक है। खासतौर पर इसलिए चूंकि घाटे के आधिकारिक आंकड़े बैलेंस शीट से इतर ली गई उधारी को छिपाते हैं। सरकारी ऋण और जीडीपी का अनुपात वांछित स्तर से ऊंचा है। खतरे की बात यह है कि चुनाव के बाद बनी सरकार इससे अलग राह चुन सकती है।

वह कमतर मुद्रास्फीति से राहत महसूस करते हुए विस्तारवादी नीतियां अपना सकती है ताकि अव्यावहारिक वादों को पूरा कर सके या फिर अवास्तविक वृद्धि लक्ष्यों को हासिल करने का प्रयास किया जा सके। यानी कुछ ऐसी नीतियां जिनके खिलाफ कुछ अन्य देशों में अलग-अलग मत सुनने को मिल रहे हैं।

साप्ताहिक मंथन

टी. एन. नाइनन

विनय सिन्हा

वित्तीय बचत की पूरी जानकारी आए सामने!

अगर रीपो दर, टर्म प्रीमियम और ऋण का विस्तार आदि सभी सामान्य होते हैं तो ऋण दर में दो फीसदी से अधिक की गिरावट आ सकती है। विस्तार से बता रहे हैं **नीलकंठ मिश्रा**

क्या हमारी बचत पर्याप्त है? यह सवाल आम परिवारों के साथ-साथ अर्थव्यवस्था की दृष्टि से भी समान रूप से महत्त्वपूर्ण है। बचत में कमी का अर्थ होगा निवेश के लिए कम पूंजी। इसके दो विपरीत परिणाम हो सकते हैं: इससे पूंजी महंगी होती है और अर्थव्यवस्था की विदेशी पूंजी पर निर्भरता बढ़ती है। इनमें बाद वाली स्थिति अर्थव्यवस्था को अस्थिर बनाती है। आम परिवारों की वित्तीय बचत गहन विश्लेषण का विषय है क्योंकि वह अर्थव्यवस्था में सहजता से विचरण करती है और फंड की लागत का अहम वाहक है। निजी कंपनियों और सार्वजनिक उपक्रमों की बचत आमतौर पर उन्हीं में निवेशित हो जाती है।

ऐतिहासिक तौर पर आम परिवारों की वित्तीय बचत अर्थव्यवस्था की कुल बचत का तिहाई रही है। बीते तीन दशकों से यह जीडीपी के नौ फीसदी से 12 फीसदी के बीच रही। इस अनुपात में गिरावट आई और वित्त वर्ष 2017 में यह 9.4 फीसदी रहा। यह दो दशक का निचला स्तर था। इससे अतिशय खपत और अर्थव्यवस्था के निवेश का भुगतान न कर पाने की आशंका उत्पन्न हुई है। ऐसे समय में जबकि वास्तविक ब्याज दर बहुत ऊंची है, यह आंकड़ा विचित्र लगता है क्योंकि आमतौर पर यही वित्तीय बचत को बढ़ावा देता है। वित्त वर्ष 2018 में इसने 11.1 फीसदी के साथ मजबूत वापसी की लेकिन इसकी अधिक चर्चा नहीं हुई। माना जा रहा है कि 2019 में यह 11.3 फीसदी के साथ 9 वर्ष के उच्चतम स्तर तक पहुंचेगी। ऐसा तब है जबकि आरबीआई की अनुमान प्रक्रिया का इस्तेमाल किया जाता है जिसके बारे में अब अनुमान जताया जा रहा है कि वह सीमित है।

मौजूदा लेखा में अर्थव्यवस्था की कुल बचत को शामिल किया जाता है: यानी उत्पादन पर खपत की अति। परंतु सकल घरेलू वित्तीय बचत का आकलन करना इतनी सीधी सपाट बात नहीं है। हालांकि परिभाषा के आधार पर देखा जाए तो यह औपचारिक है और इसके आकलन के लिए अन्य वृहद आर्थिक चरों की तुलना में कम ही अनुमान की आवश्यकता होती है।

वित्तीय बचत के घटकों को खंगालते हुए हमारा सामना दो बड़े क्षेत्रों से होता है जिनके अनुमान से कम आकलन की संभावना है। पहला, म्युचुअल फंडों की आवक में इजाफा और अल्प बचत योजनाओं के संग्रह में उछाल। वित्त वर्ष 2017 में म्युचुअल फंडों में 3.5 लाख करोड़ रुपये की राशि आई। इसमें से 1.7 लाख करोड़ रुपये की राशि आम परिवारों से आई। जो आंकड़े प्रस्तुत किए गए, उनमें केवल 12,800 करोड़ रुपये की जानकारी दी गई जो 1.7 लाख करोड़ रुपये का 7.5 फीसदी था। म्युचुअल फंड जिन शेयर और डिबेंचर का हिस्सा हैं, उनकी हिस्सेदारी वर्ष 2018 में 1.5 लाख करोड़ रुपये रही। परंतु तब तक मजबूत म्युचुअल फंड आवक के अलावा शेयर बाजार में बढ़ती खुदरा हिस्सेदारी ने वैकल्पिक निवेश फंडों के परिसंपत्ति प्रबंधन को गति दी थी और यह 1.8 लाख करोड़ रुपये से अधिक हो गया था। यानी उल्लिखित वित्तीय बचत और उसके अनुमान में जीडीपी के एक फीसदी के बराबर अंतर है।

दूसरा, अल्प बचत योजनाओं में आवक एक वर्ष पहले की 50 हजार करोड़ रुपये से बढ़कर दो लाख करोड़ रुपये हो चुकी है। परंतु दी गई जानकारी में अभी भी इसे 82,000 करोड़ रुपये बताया जा रहा है जो कि कुल आवक की करीब आधी है।

हमने अनुमान लगाया कि बचत के अनुमान में यह कमी वित्त वर्ष 2017 में जीडीपी के 2 फीसदी के बराबर हो सकती है जबकि वित्त वर्ष 2018 में यह जीडीपी के एक फीसदी से भी अधिक हो सकती है। काफी हद तक यह संभव है कि उपरोक्त तमाम आवक में कुछ हिस्सा ऐसी समायोजन राशि का भी हो जिसे हमने ध्यान में नहीं रखा है।

दूसरी बड़ी चिंता पर्यवेक्षकों की यह है कि राज्य और केंद्र सरकारें देश की वित्तीय स्थिति को विसंगतिपूर्ण बना रही हैं। बहरहाल, आम आशंकाएं हैं कि सार्वजनिक क्षेत्र, निजी क्षेत्र की बचत का स्वीकरण करता है जबकि बीते कुछ वर्ष के दौरान सार्वजनिक क्षेत्र की बचत की बात करें जीडीपी के प्रतिशत के रूप में उसमें कोई खास बदलाव नहीं आया है। गैर सरकारी सार्वजनिक संस्थानों की बचत अवश्य सरकारी राजस्व घाटे की भरपाई में काम आई है। विशुद्ध स्तर पर भी देखें तो सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों के ऋण के समायोजन के पश्चात निजी बचत में आ रही कमी में गिरावट आई है। बीते दो वर्ष में संभवत: बजटोतर व्यय के मोर्चे पर हालत खराब हुई हो लेकिन यह गिरावट भी जीडीपी के आधा प्रतिशत से अधिक नहीं होगी। यह इस अवधि में आम परिवारों की वित्तीय बचत में सुधार से कम होगी।

ये केवल सांख्यिकीय आंकड़े भर नहीं हैं बल्कि इनका अर्थव्यवस्था में फंड की लागत पर भी अहम प्रभाव हो सकता है। जिस ब्याज दर पर कोई संस्था ऋण लेती है, उसे तीन हिस्सों में बांटा जा सकता है। रीपो दर, टर्म प्रीमियम और ऋण का विस्तार। इनमें से पहला हिस्सा वह दर है जो मौद्रिक नीति समिति द्वारा तय की जाती है, दूसरा है 10 वर्ष के सरकारी बॉन्ड और रीपो दर के प्रतिफल के बीच का अंतर और तीसरा है कंपनी द्वारा लिए गए ऋण की दर और सरकारी प्रतिभूति के प्रतिफल की दर का अंतर। ये तीनों फिलहाल बढ़े हुए हैं। अर्थव्यवस्था के धीमेपन पर गौर करें तो वास्तविक रीपो दर काफी बढ़ी हुई है। टर्म प्रीमियम दशक के उच्चतम स्तर के करीब है। वित्तीय तंत्र में क्षमतागत मसले के चलते ऋण का दायरा भी ऊंचा बना हुआ है। अगर रीपो दर, टर्म प्रीमियम और ऋण का विस्तार, सामान्य होते हैं तो उधार दर में दो फीसदी से अधिक की गिरावट आएगी। मुद्रास्फीति में कमी आने से रीपो दर में गिरावट आ सकती है, लेकिन ऋण का विस्तार जल्दी नहीं सिमटने वाला क्योंकि वित्तीय तंत्र में क्षमता का मसला बरकरार है। परंतु टर्म प्रीमियम अनुचित ढंग से ऊंचा है और इन दोनों में स्पष्टता आने के साथ उसमें गिरावट आनी चाहिए। इससे यह भी स्पष्ट होगा कि सरकार द्वारा स्वीकृत वित्तीय बचत का स्तर अनुमान से काफी कम होता है। आर्थिक वृद्धि पर निस्संदेह असर पड़ा है क्योंकि सरकार ने राजकोषीय सख्ती अपनाने की कोशिश की है, परंतु उसका लाभ मौद्रिक स्थितियों में परिलक्षित नहीं हो रहा है और वे अत्यंत सख्त बनी हुई हैं।

(लेखक एशिया पैसिफिक स्ट्रैटेजी के सह-प्रमुख और क्रेडिट सुइस के भारत संबंधी नीतिकार हैं।)

हिंदू युवा वाहिनी से मिलती रही है योगी को राजनीतिक ऊर्जा

सियासी हलचल

आदिति फडणीस

लोगों को पहला बदलाव भोजन में दिखा था। योगी आदित्यनाथ एक महंत हैं और पवित्रता पर विशेष ध्यान देते हैं। सात्विकता और पवित्रता जैसे कारणों से वह कहीं भी भोजन नहीं करते थे। लेकिन सांसद होने के नाते उन्हें क्षेत्र के लोग खाने का न्योता भी देते थे। लेकिन योगी के समर्थक पहले ही आगाह कर देते थे कि 'महाराज जी खाना नहीं खाएंगे।' वह खाने के नाम पर केवल फल या मेवा ले लेते थे।

लेकिन अब गोरक्षनाथ पीठ के महंत योगी आदित्यनाथ पार्टी अध्यक्ष अमित शाह के साथ हर जगह खा लेते हैं। आप उन्हें यादवों या दलितों के साथ खाते हुए देख सकते हैं जबकि पहले इसके बारे में सोचा भी नहीं जा सकता था। लेकिन अब उन्हें यह करना पड़ रहा है। उनके समर्थकों को यह लग रहा है कि एक अहम नियम टूट रहा है। एक समर्थक से योगी ने कहा था कि अब वह केवल गोरक्षनाथ पीठ के महंत ही नहीं बल्कि समूचे राज्य एवं उसके निवासियों के मुख्यमंत्री भी हैं। जब उन्हें मुख्यमंत्री बनाया गया था तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से एक समर्थक ने इसकी वजह पूछी थी। प्रधानमंत्री मोदी ने कहा था, 'इन लोगों में सबसे अच्छे वही हैं।' उस समय केशव प्रसाद मौर्य थे जिन्हें उप मुख्यमंत्री बनाया गया और उनकी कथित तौर पर योगी से बात भी नहीं होती थी। दूसरे विकल्प मनोज सिन्हा थे जो रेल राज्यमंत्री होने के साथ संचार मंत्रालय का स्वतंत्र प्रभार भी देख रहे थे। वहीं आदित्यनाथ क्षितिज पर बहुत दूर नजर आते थे। गोरखपुर लोकसभा क्षेत्र को 'मंदिर की सीट' माना जाता है।

लेकिन पीठ के पुराने महंतों- दिग्विजयनाथ और अवैद्यनाथ ने कभी भी 'सच्चे हिंदू' होने का दावा नहीं रखा। हिंदू महासभा के प्रतिनिधि रहे दोनों महंत हिंदू धर्म से जुड़े मसलों पर भाजपा को कुछ हद तक चुप्पी साधने वाला ही मानते थे। मंदिर और संसदीय क्षेत्र की कमान संभालने के बाद आदित्यनाथ को यह अहसास हुआ कि गंभीरता से लिए जाने के लिए उन्हें भाजपा के भीतर अपनी छाप बनानी होगी। वर्ष 2002 के विधानसभा चुनाव में भाजपा ने गोरखपुर से शिव प्रताप शुक्ला को उम्मीदवार बनाया था। इससे नाखुश आदित्यनाथ ने राधामोहन दास अग्रवाल को हिंदू महासभा के टिकट पर मैदान में उतार दिया। और अग्रवाल ने शुक्ला को मात भी दे दी। इस घटना ने आदित्यनाथ को पूर्वांचल में भाजपा के निर्विवाद नेता के तौर पर स्थापित कर दिया। अपनी स्थिति को मजबूती देने के लिए उन्होंने हिंदू युवा वाहिनी नामक गैर-राजनीतिक संगठन भी खड़ा कर दिया।

सवाल है कि भाजपा के युवा संगठनों- अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद एवं भारतीय जनता युवा मोर्चा के रहते हुए युवा वाहिनी की जरूरत क्या थी? इस पर एक भाजपा समर्थक ने कहा कि हिंदू युवा वाहिनी थोड़ा अलग संगठन है। जहां विद्यार्थी परिषद और युवा मोर्चा 'प्रबुद्ध एवं वैचारिक' मिजाज वाले संगठन हैं, वहीं युवा वाहिनी को 'लंपट' माना जाता है जो विचारधारा के बजाय 'दंगा' करने में अधिक रुचि लेती है। दूसरे शब्दों में, हिंदू युवा वाहिनी एक लड़ाकू संगठन है। आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2002 में महज 200 सदस्यों वाली युवा वाहिनी की सदस्य संख्या वर्ष 2014 में 15 लाख तक पहुंच गई थी। इस इलाके में बेरोजगारी की समस्या काफी गंभीर है। ऐसे में इलाके के युवाओं को युवा वाहिनी के रूप में एक रुतबा मिल गया।

अकेले गोरखपुर मंडल में ही करीब 5 लाख लोगों ने सदस्यता हासिल की और इसका विस्तार गांव-गांव तक हो गया। इसके कार्यकर्ताओं को इस इलाके में हर साल सैकड़ों लोगों की मौत के लिए जिम्मेदार बीमारी इनसेफेलाइटिस के बारे में जागरूकता भी फैलानी होती थी। भाजपा के एक नेता के मुताबिक इसका नतीजा यह हुआ कि जिन युवाओं के पास अपने कामकाज के बारे में बताने के लिए कुछ नहीं होता था, अब वह बड़े गर्व से कहता था, 'मैं हिंदू युवा वाहिनी का पदाधिकारी हूं।'

भाजपा ने बड़ी चुप्पी के साथ युवा वाहिनी का विस्तार होते हुए देखा लेकिन उसकी नजर हमेशा बनी रही। जब आदित्यनाथ ने मुख्यमंत्री पद की शपथ ली तो बहुतों ने इस उम्मीद में खूब जश्न मनाया था कि अब उनकी किस्मत भी पलटेगी। लेकिन उनके हाथ निराशा ही लगी। मुख्यमंत्री बनने के बाद आदित्यनाथ के उठाए गए पहले तीन कदम अवैध बालू खनन पर रोक, ट्रकों की ओवरलोडिंग रोकने और कच्ची शराब की बिक्री पर प्रतिबंध लगाने के थे। एक भाजपा कार्यकर्ता कहते हैं, 'इन फैसलों ने युवा वाहिनी कार्यकर्ताओं के दो नंबर के कारोबार को पूरी तरह ठप कर दिया।' उनका दावा है कि अवैध खनन इन कार्यकर्ताओं का साइड-बिज़नेस था और ट्रकों को आगे जाने की इजाजत 'टैक्स' चुकाने के बाद ही मिलती थी।

इसका असर यह हुआ कि लोग युवा वाहिनी का साथ छोड़ने लगे। प्रदेश अध्यक्ष सुनील सिंह अलग हुए और फिर दलित बिरादरी से आने वाले राम लक्ष्मण भी चले गए। सुनील सिंह ने गोरखपुर लोकसभा उपचुनाव में भाजपा को मिली हार की वजह युवा वाहिनी कार्यकर्ताओं के प्रचार से अलग रहने को ही बताया था। एक भाजपा नेता के मुताबिक खुद पार्टी अध्यक्ष अमित शाह ने आदित्यनाथ से कहा था कि अब उन्हें हिंदू युवा वाहिनी की नकेल कसनी चाहिए।

लेकिन आदित्यनाथ इसे जल्दी खत्म नहीं होने देना चाहते। इसीलिए आम चुनावों की अधिसूचना जारी होने के दिन ही उनकी सरकार ने युवा वाहिनी के कई पदाधिकारियों को कई बोर्डों एवं निगमों में लाभकारी पदों पर नियुक्त करने का आदेश जारी कर दिया। भले ही आचार संहिता के चलते इन लोगों को लाभ एवं सुविधाएं नहीं मिल पाई हैं लेकिन चुनाव खत्म होते ही वे पद संभाल लेंगे। एक भाजपा कार्यकर्ता कहते हैं, 'पार्टी में निचले स्तर से आने वाले नामों को आगे बढ़ाने की प्रणाली है लेकिन इस मामले में हमारी तरफ से भेजे गए नाम सूची में नजर ही नहीं आए।'

यह रचनात्मक तनाव क्या असर दिखाएगा? भाजपा समर्थक कहते हैं कि आदित्यनाथ और हिंदू युवा वाहिनी चाहे जो कहें लेकिन सत्ता की कीमत चुकानी ही होती है। उनका मानना है कि आदित्यनाथ के प्रभाव का जरिया रही हिंदू युवा वाहिनी एक दिन खत्म हो जाएगी।

कानाफूसी

पनीरसेल्वम की तीर्थ यात्रा

पिछले दिनों एक तथ्य ने कई लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। दरअसल, जिस दिन प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने वाराणसी संसदीय क्षेत्र से अपनी उम्मीदवारी का पर्चा दाखिल किया, उस दिन अखिल भारतीय अन्ना द्रविड़ मुन्नेत्र कषगम (एआईएडीएमके) के समन्वयक और तमिलनाडु के उपमुख्यमंत्री ओ पनीरसेल्वम भी वाराणसी में ही मौजूद थे।

यह जानकारी सार्वजनिक होने की देर थी कि लोगों ने यह अटकल लगानी शुरू कर दी कि संभवत: वह बहुत जल्दी भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) में शामिल हो सकते हैं। इसके प्रमाण के रूप में वे तस्वीरें पेश की गईं जिनमें पनीरसेल्वम अपने परिजनों के साथ हैं और भगवा वस्त्र में लिपटे नजर आ रहे हैं। हालांकि पनीरसेल्वम ने इन अटकलों को पूरी तरह खारिज कर दिया है। उनका कहना है कि वह चाहते हैं कि उनके निधन के बाद उनका शरीर अन्नाद्रमुक के ध्वज में लिपटा हो। वहीं टीटीवी दिनाकरन के नेतृत्व वाले अम्मा मक्काल मुन्नेत्र काची के बागी नेताओं ने कहा कि पनीरसेल्वम ने राज्यपाल का पद हासिल करने के लिए यह तीर्थ यात्रा की है और एक बार चुनाव के नतीजे सामने आने के बाद सच सबके सामने आ जाएगा।

आपका पक्ष

भारत में विदेशी नागरिकता का सवाल

भारत में अब एकल नागरिकता का कानून पुराना पड़ चुका है। इन दिनों बहुत सारे लोग हैं जो नौकरी के लिए दूसरे देशों में जा रहे हैं। वहां पैदा होने वाली उनकी संतानें स्वाभाविक तौर पर उन देशों की नागरिक बन जाती हैं। अगर उन्हें भारतीय बने रहना है तो वहां की नागरिकता छोड़नी पड़ती है। ऐसा नहीं कि दूसरे देशों में बसे भारतीयों को हम पराया मानने लगते हैं। पिछले कुछ वर्षों में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जिन देशों में गए, वहां उन्होंने भारतीय लोगों को संबोधित किया। यह भी सच है कि विदेशों में बसे भारतीयों के लिए कानूनी सहूलियत देने की मांग बढ़ रही है। अनिवासी भारतीयों के लिए मतदान के अधिकार की मांग भी उठी। दोहरी नागरिकता लेकर कारोबार या नौकरी करने वाले लोग किन देशों में टैक्स देंगे या किस तरह की न्यायिक प्रक्रियाओं से बंधे रहेंगे, इन सवालों के हल खोजे जा सकते हैं। अहम बात यह है कि दोहरी नागरिकता हमारी भारतीयता का विस्तार करेगी। अक्षय कुमार भारतीय नागरिक नहीं हैं। यह बात मुंबई में मतदान के दौरान सामने आई। कई सितारों ने वोट दिए। उनकी पत्नी ट्विंकल ने भी वोट डाला। लेकिन इस सूची में अक्षय कुमार नहीं थे, क्योंकि उन्होंने कनाडा की नागरिकता ले रखी है। चुनाव के बीच उन्होंने प्रधानमंत्री का इंटरव्यू लिया। अक्षय भारतीय नागरिक न होते हुए भी पूरी तरह भारतीय हैं। यही बात कुछ और सितारों के बारे में कही जा सकती है, जिनकी नागरिकता तकनीकी तौर पर किसी और देश की है। राहुल गांधी की नागरिकता के सवाल पर प्रियंका गांधी वाड्रा कह रही हैं कि राहुल भारत में पैदा हुए और यहीं रहे। उन्हें कौन बाहरी कह सकता है। अजीब बात है कि जो लोग अक्षय कुमार को विदेशी नहीं बता पा रहे, वे राहुल गांधी को बता रहे हैं।

प्रियंबदा, गोरखपुर

चुनाव के लिए नामांकन भरने के बाद राहुल गांधी की नागरिकता पर सवाल उठे थे

मुद्दों पर काम करे नई सरकार

लोकसभा चुनाव परिणाम सामने आने के बाद नई सरकार का गठन हो जाएगा। इसके बाद दलों द्वारा विभिन्न मुद्दों को हल करने की तरफ ध्यान जाएगा। लेकिन कुछ ऐसे मुद्दे भी हैं जो हर पांच साल बाद होने वाले चुनाव में प्रत्याशियों द्वारा खत्म करने की बात कही जाती है। जैसे बेरोजगारी खत्म करना, भ्रष्टाचार मिटाना, गरीबी हटाना आदि। सरकार आई और गई लेकिन ये वर्षों पुराने मुद्दे आज भी प्रत्येक सरकार के चुनाव से पहले वोट मांगने के आधार का कार्य कर रहे हैं। इसलिए जरूरत है कि नव निर्वाचित सरकार पहले इन मुद्दों को हल करने की कोशिश करे, ताकि पांच साल बाद आने वाले अगले चुनाव में कुछ अलग मुद्दे देखने को मिलें।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।